ओ३म्

मैं हिन्दू क्यों बना ?

आनन्दसुमन सिंह

ओ३म्

मैं हिन्दू क्यों बना?

लेखक
कुँवर आनन्दसुमन सिंह
(वैदिक प्रवक्ता)

सरस्वती प्रकाशन
वैदिक क्रान्ति परिषद्, देहरादून

प्रकाशक : **सरस्वती प्रकाशन**
वैदिक क्रान्ति परिषद्
देहरादून

संस्करण : २००२

सहयोग : १०/- रुपये

मुद्रक : अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-३२

दो शब्द

धर्म आज के युग में अर्थहीन हो गया है।

कारण है धर्म एवं सम्प्रदाय को पर्यायवाची माना जाना न तो कभी धर्म समाज ने इसके खण्डन की आवश्यकता समझी, और न कभी बुद्धिजीवी, वैज्ञानिक वर्ग ने इसके स्पष्टीकरण की आवश्यकता को अनुभव किया, न इस पर विस्तार से चर्चाएँ हुईं। यही कारण है कि धर्म हौवा बन गया है।

सूर्य एक है, चन्द्रमा, जल, वायु, पृथ्वी, परमात्मा सभी एक हैं, फिर धर्म अनेक कैसे हो सकते हैं? मत, मज़हब, सम्प्रदाय, रिलिजन, व्यक्तियों की कल्पना की उड़ान भर हैं। धर्म व्यक्ति के जीवन की व्यावहारिकता से जुड़ा एक अध्याय है, जिस प्रकार व्यक्ति आँख, हाथ, पैर के बिना अधूरा है, उसी प्रकार व्यक्ति एवं समाज धर्म के बिना पंगु है, भ्रष्ट है, अमान्य है। यही कारण है विश्व की वर्तमान दयनीय दशा का।

धर्म कभी परिवर्तित नहीं होता। वह तो अनन्त वर्षों से प्रवाहमान, सभी के लिये समान मार्गदर्शन एवं बुद्धि-प्रशस्ति का मार्ग है। उसका अनुसरण ही व्यक्ति का कर्त्तव्य (धर्म) है।

—आनन्दसुमन सिंह

वैदिक क्रान्ति परिषद सहायतार्थ

कैप्टन बिन्देश्वरी प्रसाद सोनी	फैज़ाबाद	रु. 1500/-
बजरंग एक्सट्रक्शन लिमिटेड	इंदौर	रु. 1500/-
सतगुरु ऑयल (प्रा.) लिमिटेड	इंदौर	रु. 1500/-
आर.जी. इंडस्ट्रीज़	इंदौर	रु. 1000/-
श्री पं. पन्नालाल जी अरोड़ा	उदयपुर	रु. 500/-
श्री हजारीलाल आर्य जी	उदयपुर	रु. 500/-
डॉ. अमृतलाल तपाड़िया	उदयपुर	रु. 500/-
श्री प्रमोदकुमार उज्ज्वल	उदयपुर	रु. 500/-
श्री जितेन्द्रपाल शर्मा	उदयपुर	रु. 2500/-
श्री रतनलाल आर्य	दादरी	रु. 501/-
आर्यसमाज	दादरी	रु. 1000/-

प्रकाशकीय

पाठक वृन्द,

वन्देमातरम् नमस्ते!

विश्व आज एक भीषण त्रासदी से गुज़र रहा है। उस पर वैश्वीकरण की छाया भी अपना तीक्ष्ण प्रभाव डाल रही है। आतंकवाद, सम्प्रदायवाद, वर्गवाद और जातिवाद। इन चार वादों ने संसार को पुनः चिन्तन–मनन की ओर अग्रसर किया है। विश्व का चैतन्य मन पुनः यह विचार करने को विवश हुआ है कि धर्म और सम्प्रदाय को पर्याय मानने से हमने क्या–क्या खोया है? जनसंख्या के बोझ ने व्यक्ति को इतना सस्ता कर दिया है कि जीवन का मूल्य चाँदी के चन्द सिक्के हो गए हैं। सम्प्रदाय का जुनून व्यक्ति को अन्यों के जीवन से खिलवाड़ करने की अनुमति सहर्ष प्रदान कर रहा है। ऐसी परिस्थितियों में भी यदि कोई एक विचार हमें शीतलता प्रदान करता है तो उसका नाम है 'वेद'।

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। वेद

अर्थात् सबको मित्र की दृष्टि से देखो एवं

मनुर्भव जनया देव्यम् जनम्। वेद

अर्थात् हम स्वयं मानव बनें और सन्तानों के रूप में देवों को जन्म दें।

आज आर्यसमाज के सदस्यों, अनुयाइयों, पदाधिकारियों एवं शुभ–चिन्तकों के कन्धों पर यह बोझ आ गया है कि वह पुनः वैदिक क्रान्ति के मूल मंत्र से विश्व को गुंजायमान कर दें। सम्प्रदाय की मृग मारिचिका में बहकने वालों को धर्म की चाँदनी की शीतलता प्रदान करें। धर्म के मूल वैदिक धर्म की विश्व–व्यापी प्राणीमात्र के कल्याण की भावना से पुनः इस जगत को, इस मही को पूरित कर दें। जातिवाद से मिथ्या विश्वास करने वालों को बता दें कि संसार में केवल पाँच ही जातियाँ हैं। स्त्री जाति, पुरुष जाति, पशु जाति, पक्षी जाति एवं सरिसृप जाति। शेष तो कर्मानुसार वर्गों का विभाजन था। अपने–अपने वर्ग की अभिमानता के जीवन को जीने वालों को बता दें कि उनका कर्म है—समाज के सभी वर्गों से सम–व्यवहार अर्थात् प्रियम् सर्वस्य पश्यत् उत् शूद्र उत् आर्याय अर्थात्—हम सभी को प्रिय दृष्टि से देखें, चाहे वे शूद्र हों, चाहे वैश्य, चाहे क्षत्रिय हों, चाहे ब्राह्मण। इस जिम्मेदारी को निभाने के लिए आर्यजनों को पुनः सर पर कफ़न बाँधकर श्रद्धानन्द और लेखराम का रूप धरना होगा। तभी सफल होगा महर्षि दयानन्द का मिशन, तभी सफल होंगे क्रांति के दस सूत्र।

आज से 21 वर्ष पूर्व (30 अगस्त, 1981 को) इसी भावना को मन में लेकर रणक्षेत्र में कूद पड़ा था, एक

दिवाना जिसके प्रथम वक्तव्य ने ही समूचे विश्व के बुद्धिवादियों को वैदिक धर्म की सर्वव्यापकता का बोध करा दिया था और इतना चमत्कृत किया था कि उनकी आँखें चौंधिया गई थीं। महर्षि दयानन्द सरस्वती के उस दिवाने का नाम है डॉ. आनन्दसुमन जिसने पिछले 21 वर्ष में देश–देशान्तर में केवल अपने प्रवचनों से ही क्रान्ति की धारा को प्रवाहित नहीं किया अपितु लेखनी से भी क्रान्ति के महामंत्र को प्रचारित और प्रसारित किया। अब डॉ. आनन्दसुमन 22वें वर्ष में प्रवेश कर गए हैं, और विगत् वर्ष 26 जून, 2001 के वज्रपात (सहधर्मिणी श्रीमती सरस्वती सिंह के अचानक देहान्त) के उपरान्त पुनः रणक्षेत्र में कूद पड़े हैं।

उन्हीं डॉ. आनन्दसुमन की प्रथम रचना "मैं हिन्दू क्यों बना?" (जो विदेशों में 'Why I am Not a Muslim' के नाम से प्रसिद्ध है) का पुनः प्रकाशन कर समाज के लिये पुनः क्रान्ति का मार्ग प्रकाशित करने की भावना से यह पुष्प आपके करों में समर्पित है।

हमें विश्वास है कि इसका लाभ समाज के हर वर्ग को होगा और प्रकाशन की यह योजना सफल होगी। हमें आशा है कि आप सबका स्नेह, सहयोग व आशीर्वाद हमें सदैव मिलता रहेगा।

क्रान्तिकारी शुभकामनाओं सहित।

दिनांक 30 अगस्त, 2002

संचालक, सरस्वती प्रकाशन
वैदिक क्रान्ति परिषद्
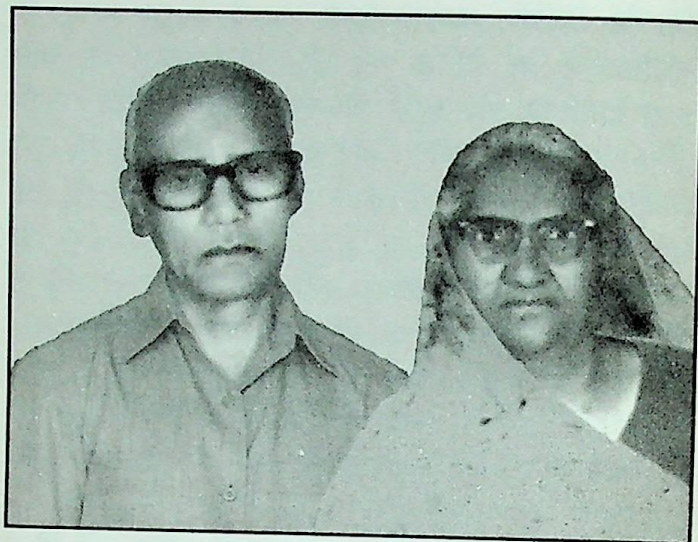
स्व० श्रीमती द्रौपदी देवी शर्मा सहधर्मिणी श्री जितेन्द्रपाल शर्मा (प्रधान, आर्यसमाज हिरणमगरी, उदयपुर) का देहांत 30.5.1998 को हो गया था, वह दातागंज, बदायूँ (उ०प्र०) की मूल निवासी थीं, श्री जितेन्द्रपाल शर्मा का उन्होंने हर क्षेत्र में साथ दिया और परिवार में आर्य मर्यादा का पालन किया। उनके तीन पुत्र (कमलकांत, भूपेन्द्र व धर्मेन्द्र) तथा तीन पुत्रियाँ (सरोज, गीतेश्वरी, किरनबाला) हैं जो अपने-अपने क्षेत्रों में यश अर्जित कर रहे हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु श्री जितेन्द्रपाल शर्मा जी ने 2500 रुपए का सहयोग दिया है।

धन्यवाद!

मैं हिन्दू क्यों बना ?

मुझे अपने घर लौटे इक्कीस वर्ष बीत गये, अब बाइसवें वर्ष में प्रवेश किया है। विगत् इक्कीस वर्षों में कश्मीर से कन्याकुमारी तथा गुजरात से अरुणाचल प्रदेश तक मैंने भारत को निकट से जाना, देखा और समझा। अपने देश में प्रचलित अनेक रीति–रिवाजों एवं विचारों से परिचित हुआ, अपने देश के अनेक नागरिकों से मिलने का सुअवसर मिला। देश की अनेकता में एकता वाले वातावरण ने मुझे रोमांचित भी किया, अनेक ऐसी घटनाएँ भी घटीं जिनसे उत्साह शिथिल हुआ, किन्तु एक विशेषता है मेरे देश में जिसको उच्चकोटि के कवि इकबाल ने इस रूप में व्यक्त किया है—

यूनान मिस्र रोमां सब मिट गये जहां से
अब तक मगर है बाकी नामोनिशां हमारा।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी
सदियों रहा है दुश्मन दौरे ज़मा हमारा।

ये पंक्तियाँ समस्त संसार के लिये चुनौती हैं। लगभग दो अरब वर्षों से वेद, स्मृति, दर्शन व शास्त्रों की कठोर किन्तु सरस नींव पर खड़ा मेरा भारत अचल है, दृढ़ है। सारे संसार के स्वरूप को अपने में समाए खड़ा यह देश

न कभी मिटा, न इसका स्वरूप बदला, न इसने कभी अपने विचारों में परिवर्तन किया। जितने कष्ट, राष्ट्र व संस्कृति–घाती आक्रमण भारत ने झेले हैं, उनमें से एक भी किसी अन्य राष्ट्र ने नहीं झेला। किन्तु उसने अपनी मूल संस्कृति में सहस्रों परिवर्तन किये हैं। भारत अविचल, अखण्ड, निर्भान्त, हिमालय के अभिषेक और सिन्धु के नीररूपी चरणों में अपने स्वरूप की गाथा को अनगिनत विश्व–प्रसिद्ध कवियों–लेखकों–विद्वानों से वर्णन करवा चुका है और अब भी अपनी संस्कृति की प्राचीनता, सर्वव्यापकता, सार्वभौमिकता एवं मानवता के गुणगान करवा रहा है। यह क्रम अनन्त वर्षों से प्रवाहमान है और अनन्त वर्षों तक चलेगा। यही प्रत्येक भारतीय की भावना है। कभी आर्यावर्त, कभी वैदिक साम्राज्य, कभी राम–राज्य, कभी हिन्दोस्तां, कभी भारत, वर्तमान इण्डिया किन्तु पुनः किसी कवि के शब्दों में—

यह चमन यूं ही रहेगा और हजारों जानवर,
अपनी-अपनी बोलियाँ सब बोलकर उड़ जायेंगे।

विगत् दो अरब वर्षों में वैदिक संस्कृति में कोई परिवर्तन विद्वान, जल्लाद, कट्टरपंथी, कूटनीतिज्ञ, आक्रमणकारी, सेवा के नाम पर विष देने वाले नहीं कर पाये। वेद आज भी सारे संसार के लिये ज्ञान का सूर्य है। जिस प्रकार हर नवजात शिशु का अपनी जन्मदायिनी के स्तन–पान पर अधिकार है उसी प्रकार प्रत्येक मानव का वेदमाता के पाठन–पठन, श्रवण पर पूर्ण अधिकार है।

वेद तो माँ है जो सबको स्नेह व संरक्षण देती है।

संसार में कोई भी सम्प्रदाय, मत, मज़हब अपने स्वरूप को पाँच सहस्त्र वर्षों से अधिक जीवित नहीं रख पाया। इतिहास साक्षी है। किन्तु मेरी संस्कृति तो आज भी अपने करुणामय, पुत्रवत्सल स्नेह को लुटा रही है। सभी से स्नेह, बन्धुत्व एवं सबके कल्याण का उपदेश कर रही है। इस सब पर यदि मुझे गर्व है तो क्यों न हो? विगत् इक्कीस वर्षों में पत्रकारों, बुद्धिजीवियों ने एवं पृथक्–पृथक् समुदाय के सदस्यों ने मुझसे बार–बार यही प्रश्न किया कि आपने इस्लाम मज़हब को त्यागकर वैदिक धर्म को ही क्यों अपनाया? इस्लाम से अधिक जनसंख्या वाले एवं धनी तो ईसाई हैं, आपको ईसाई बनना चाहिए था। पश्चात् कम्युनिस्ट हैं; आपको उनके समाज में जाना चाहिए था। किन्तु आपने ऐसे धर्म को चुना जो संसार में केवल एक छोटा–सा समूह मात्र है, उनका यह प्रश्न मुझे वैसे ही लगता है जैसे एक बच्चा टब में नहाना पसन्द करता है किन्तु तरणताल या नदी में नहाना उसके लिये भय उत्पन्न करता है। मैं मानता हूँ कि संसार में सबसे अधिक संख्या ईसाइयों की है, पश्चात् मुस्लिम, कम्युनिस्ट व अन्य सम्प्रदाय हैं। किन्तु यह तो सभी समझते हैं कि भेड़ या बकरियों के रेवड़ (समूह) में जब एक सिंह आ जाता है तब उनमें किस प्रकार खलबली मच जाती है। किस प्रकार वह रेवड़

छिन्न–भिन्न हो जाता है। वैदिक धर्म उसी प्रकार है जिस प्रकार एक अथाह सागर और अन्य समुदाय उसी प्रकार हैं, जिस प्रकार एक कुआँ या तालाब। तालाब में गोता लगाना बड़ा आसान है, कुएँ में कूदना और बाहर निकलना भी कठिन नहीं, किन्तु सागर में गोता लगाना, और रत्न प्राप्त करना हर एक के लिये सहज नहीं। यह तो कोई विरला ही करता है। मुस्लिम, ईसाई व अन्य समुदायों में जनसंख्या अधिक है, धन भी है। किन्तु वैचारिक स्वतंत्रता के नाम पर जो अत्याचार व अनाचार वहाँ होते हैं वे सर्वविदित हैं। अतः एक बुद्धिजीवी एवं खुले आकाश में उड़ने वाले पक्षी से यह आशा करना व्यर्थ है कि वह सोने के एक पिंजड़े में कैद होकर अपना सर्वस्व व्यर्थ गँवा दे। वैदिक धर्म एक खुला आकाश है, यहाँ हमें स्वच्छंद विचरण की स्वतंत्रता है। यही कारण है कि मैंने वैदिक धर्म में आना ही हितकर समझा। मुझे पीड़ा होती है जब मैं देखता हूँ कि मुल्ला या पादरी के आदेश पर एक पढ़े–लिखे नागरिक को भी अपमानित होना पड़ता है। मैं मानता हूँ कि यह मज़हब का नियम है। किन्तु कट्टरता–अन्धविश्वास और छिछोरापन किसी भी सम्प्रदाय के लिये घातक ही तो है। यही आज सारे मत–मज़हब और सम्प्रदायों की दशा है।

फिर सारा संसार भली–भाँति समझता है कि विश्व में पाँच सहस्र वर्ष पूर्व वैदिक साम्राज्य ही था, सभी आर्य (हिन्दू) थे। किन्तु किन्हीं कारणों से उन्हें नये मत और

मज़हबों का कोपभाजन बनना पड़ा, किन्तु उन सबका मूल तो वेद ही है। अतः मेरा यह मज़हब–परिवर्तन न केवल अपने घर में लौटने के समान था अपितु सुबह का भूला यदि शाम को अपने घर लौट आये तो उसे भूला नहीं कहते, फिर मुझे तो अपने पूर्वजों के पाप का प्रायश्चित्त भी करना था। एक पुत्र को जो स्नेह, ममता अपनी माँ की गोद में मिलती है, क्या आप कल्पना भी कर सकते हैं कि किराये की, या सौतेली माँ उसे वह स्नेह और सान्त्वना दे सकती है?

महर्षि दयानन्द का उपकार

सत्यार्थप्रकाश मानवता, विज्ञान, विवेकमय धर्म एवं न्याय, तर्क–संगत समाज की अमूल्य निधि है। सत्यार्थप्रकाश में मानव–जीवन के प्रत्येक पहलू को तार्किक एवं विवेकमय रूप में प्रस्तुत किया गया है। विज्ञान सत्यार्थप्रकाश का आधार है। वास्तव में आज जो विज्ञान है वह सब पवित्र वेद के आधार पर ही है। शत् वर्षों पूर्व महर्षि दयानन्द ने संस्कारहीन मानव समाज को सुसंस्कृत करने हेतु सत्यार्थप्रकाश की रचना की। वह काल अज्ञान, अन्धकार, पाखण्डवाद, चमत्कारवाद एवं परतंत्रता का काल था। किन्तु अडिग दयानन्द ने भय की चिन्ता न की, अन्धकार से न घबराया, निर्भय बढ़ता ही गया जब तक कि दस सूत्र मानव–जीवन की आवश्यकता के एवं चार सूत्र पाखण्ड के पूर्ण न कर लिये। उसी का नाम है सत्यार्थप्रकाश (चौदह समुल्लास वाला)। अनेक शंकाएँ थीं "विश्ववारा संस्कृति" के सम्बन्ध में, पवित्र वेद का तो लोप ही हो गया था। कोई कहता वेद शंकासुर ले गया, कोई कहता भस्मापुर। किसी का कथन था, स्त्री, शूद्र वेदों को सुन भी लें तो कानों में पिघला सीसा भर दो। यहाँ तक कि स्त्री शूद्रोनधियताम् तक कह डाला गया। तिमिर बढ़ना था,

बढ़ा। मानवता का पतन हुआ। ज्ञान–विज्ञान समाप्त हो चला। विवेक का स्तर तो था ही नहीं। प्रलय की ओर बढ़ रहा था संसार। किन्तु एक मूलशंकर जागा, वह मूल बन गया और शिव की भाँति निश्छल भाव से संसार को सत्यपथ का पथिक बनाने हेतु चल पड़ा। दासता समाप्त हुई, स्वतंत्रता मिली। किन्तु दुर्भाग्य कि दयानन्द स्वतंत्रता से पूर्व ही तिल–तिल कर जल गया। किन्तु उसकी ज्योति ने दीपक का रूप लिया, सत्यार्थप्रकाश ने मानवमात्र को झकझोर दिया। आज जो मानवता, विज्ञान, विवेक का नवीन युग दिखाई पड़ता है वह दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश का प्रभाव ही है। सत्यार्थप्रकाश का अन्तिम चतुर्दश समुल्लास इस्लाम से सम्बन्धित है। इस्लाम जिसने आज संसार के एक चौथाई भाग पर अपना अधिकार जमा रखा है। मानवों के मन में स्वर्ग–नरक का भय बैठाया है, अल्लाह के अनावश्यक रूप–जाल में फँसा लिया है। यही तो है इस्लाम। इस्लाम को आरम्भ करने का श्रेय मोहम्मद साहब को है। उन्हीं की विचार–शृंखला को इस्लाम का रूप दिया गया। आज यह प्रचारित किया जाता है कि इस्लाम संसार का अन्तिम मज़हब व मोहम्मद साहब अन्तिम ईश्वरीय दूत हैं। मोहम्मद साहब ने जो कुछ कह दिया वही इस्लामी मज़हब का नियम बनता चला गया। 1505 वर्ष पूर्व जब इस्लाम का उदय हुआ, उस समय भी ईश्वर की रचनाएँ धरती पर थीं। सत्य, न्याय, ज्ञान मानवता उससे पूर्व भी धरती पर थे। संसार कभी वेद के

सन्देशानुसार–व्यवस्थानुसार चलता था। यह युग कोई पाँच सहस्र वर्ष प्राचीन होगा। दो अरब वर्ष से आर्य संस्कृति अपने सत्यस्वरूप में संसार का मार्गदर्शन करती आ रही है। यही कारण है कि आज भी मानवता शेष है, अन्यथा आज के तथाकथित धर्म व मज़हब तो मानवता को समाप्त कर पाशविकता को; न्याय को समाप्त कर बलात्कार को; सत्य को समाप्त कर पाखण्डवाद को प्रमुख चिन्तन बना देते। किन्तु किरण जागी। कहा जाता था वेदज्ञान ब्रह्मा से जैमिनी पर्यन्त है। किन्तु अब हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि हमें जैमिनी पर रुकने की आवश्यकता नहीं, अब तो वह आगे आर्यसमाज पर्यन्त रहेगा। जब तक आर्यसमाज, सत्यार्थप्रकाश है तब तक वेद एवं वैदिक संस्कृति का हनन असम्भव है। हज़रत मोहम्मद ने इस्लाम के द्वारा सर्वप्रथम अरबवासियों में भय व्याप्त किया। अरब में उस समय पाशविकता का नंगा नाच होता था। कत्लेआम, बुतपरस्ती, व्यभिचार, जीवित लड़कियों को दफनाया जाना, करोड़ों भगवानों की उपासना—यह अरबवासियों की दिनचर्या थी। मोहम्मद साहब ने सर्वप्रथम अरबवासियों में भय बिठाया कि मैं अल्लाह का सन्देशा लाया हूँ, जो नहीं मानेगा वह भोगेगा। जिस प्रकार आज जादू के नाम पर सड़कों पर बच्चे की गरदन में छुरा गढ़ाकर रंग से रक्त दिखा दिया जाता है। वैसे ही मोहम्मद साहब ने भी दो–चार चमत्कार दिखाये, बात फैलनी थी सो फैली। सारा अरब थर्राने लगा। अब तो मोहम्मद साहब को भी मजा आने लगा।

मज़हब के नाम पर अनेकों सही–गलत काम होने लगे। मोहम्मद साहब के चेलों की संख्या बढ़ती गई। सबकी इच्छा स्वर्ग जाने की थी। अब, मोहम्मद साहब ने कहा, मैं ही तुम्हें स्वर्ग ले जा सकता हूँ। चमत्कारवाद की नयी नीति शुरू हुई, एक–एक कर सैकड़ों लोग इस्लामी हुए। फिर सैकड़ों नगर व अनेकों देश भी 1505 वर्ष के काल में इस्लाम के चमत्कारवादी विचार में बह गये। कहीं धन का लालच, कहीं बहुपत्नीप्रथा का लोभ तो कहीं तलवार का भय भी असर दिखा गया। वेदान्ती–पौराणिक सकपकाये से दुर्दशा देखते रहे। पण्डों को साहस न बँधा कि चुनौती दे सकें, वह भी बह गये। इस्लाम के साथ–साथ पौराणिक मत भी पाखण्ड की बलिवेदी पर सहर्ष चढ़ा दिया गया। उदय हुआ विनाशरूपी काल का, थरथराने लगी मानवता। भयावह अन्धकारमय वातावरण में संसार का मार्गदर्शन करंने वाले स्वयं अपने पथ से हट गये। भूल गये सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा, का सनातन सन्देश, घिर गये अज्ञान के वातावरण में पाँच सहस्र वर्षों तक हमने खोया, सब–कुछ खो दिया। यहाँ तक कि सभ्यता भी ऐसी अपना ली जो अपनी नहीं, पराई थी। इसी वातावरण में चमका था सूर्य दयानन्द का, उसी ने सँवारा था मातृभूमि, मातृसंस्कृति, मातृभाषा का स्वरूप। बदल दिया था कालिख को श्रृंगार में, अन्धकार को प्रकाश में। उसी महान निधि सत्यार्थप्रकाश के माध्यम से जिसने खदेड़ दिया था, अंग्रेज को, चुनौती दी थी मुल्लाओं व पादरियों को, ललकारा था

पण्डों को, झकझोर दिया था गद्दारों को।

दयानन्द के देहावसान को एक सौ से अधिक वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। दयानन्द के बाद हमारे समाज ने लगभग अर्ध–शताब्दी तक तो संसार में दयानन्द के प्रकाश को फैलाया, किन्तु गत् अर्ध–शताब्दी में घोर अव्यवस्था, भ्रष्टाचार, विनाश, पाखण्डवाद, चमत्कारवाद ने पुनः अपना अधिकार मानव–हृदयों पर किया है। समाज अस्त–व्यस्त है। केवल एक देश की बात नहीं, सारा विश्व भयभीत है। उन्हें ज्ञान का मार्ग दिखाना क्या दयानन्द–पुत्रों का कार्य नहीं? आज समय आ गया है कि हम सब मिलकर पुनः वेद की ज्योति से सारे विश्व को आलोकित कर दें। दयानन्द के प्रकाश को पुनः फैलाएँ, सारे विश्व में वैदिक संस्कृति की ध्वजा फहराएँ, यही युग की माँग है, यही आर्य बन्धुओं की परीक्षा का समय है। आओ, मिलकर कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के स्वप्न को साकार करें।

मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा ?

इस्लामी सम्प्रदाय में मेरी आस्था दृढ़ थी। मैं बाल्यकाल से ही इस्लामी नियमों का पालन किया करता था। विज्ञान का विद्यार्थी बनने के उपरान्त अनेक प्रश्नों ने मुझे इस्लामी नियमों पर चिन्तन करने हेतु बाध्य किया। इस्लामी नियमों में पवित्र कुरआन या अल्लाहताला या हज़रत मोहम्मद साहब पर प्रश्न करना या शंका करना उतना ही अपराध है जितना किसी व्यक्ति को किसी के कत्ल करने पर अपराधी माना जाता है। युवावस्था में आने के पश्चात् मेरे मस्तिष्क में सबसे पहला प्रश्न यह आया कि अल्लाहताला रहमान व रहीम है, न्याय करने वाला है, ऐसा मुल्लाजी खुत्बा (उपदेश) करते हैं। फिर क्या कारण है कि इस दुनिया में एक गरीब, एक मालदार, एक इन्सान, एक जानवर होते हैं। यदि अल्लाह का न्याय सबके लिये समान है, जैसा कुरआन में वर्णन किया गया है, तो सबको एक जैसा होना चाहिए। कोई व्यक्ति जन्म से ही कष्ट भोग रहा है तो कोई आनन्द उठा रहा है। यदि संसार में यही सब है तो फिर अल्लाह न्यायकारी कैसे हुआ? यह प्रश्न मैं अनेक वर्षों तक अपने मित्रों, परिजनों एवं मुल्ला–

मौलवियों से पूछता रहा, किन्तु सभी का समवेत स्वर में एक ही उत्तर था, तुम अल्लाहताला के मामले में अक्ल क्यों लगाते हो? मौज करो, अभी तो नौजवान हो। यह मेरे प्रश्न का उत्तर था। निरन्तर यह विषय मुझे बाध्य करता था और मैं निरन्तर यह प्रश्न अनेक जानकार लोगों से करता रहता था, किन्तु इसका उत्तर मुझे कभी नहीं मिला। उत्तर मिला तो महर्षि दयानन्द सरस्वती के पवित्र वैज्ञानिक ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में। जिसमें महर्षि ने व्यक्ति के अनेक जन्मों एवं इस जन्म में किये गये सुकर्म या दुष्कर्मों का अगले जन्म में भोग का वर्णन किया। यह तर्कसंगत था क्योंकि हम बैंक में जब खाता खोलते हैं, तो हमें बचत खाते पर नियमित छः माह में ब्याज मिलता है, मूलधन सुरक्षित रहता है, तथा स्थिर निधि पर एकसाथ ब्याज मिलता है; उसी प्रकार जीवात्मा सृष्टि की उत्पत्ति के पश्चात् अनेक शरीरों, योनियों में प्रवेश करता है। अतः पुनर्जन्म का मानना आवश्यक है। किन्तु मुस्लिम समाज पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करता। उनकी मान्यता तो मात्र यह है कि चौदहवीं सदी (शताब्दी) में संसार मिट जाएगा। कयामत आएगी और फिर मैदानेहश्र (जहाँ अल्लाहताला सभी के कर्मों के हिसाब से सजा या जजा देगा) में सभी का इन्साफ होगा। किन्तु उस मैदान में जो भी हजरत मोहम्मद के नेजे (ध्वज) के नीचे आ जाएगा, मोहम्मद को अपना रसूल मान लेगा वही इन्सान बख्शा जाएगा। अर्थात् उसे अपने कर्मों के फल भुगतने

का झंझट नहीं करना पड़ेगा, और वह सीधे जन्नत में जावेगा, जो बुद्धिपरक नहीं लगता। क्योंकि एक व्यक्ति के कहने मात्र से यदि यह सारा खेल चलने लगे तो संसार में अन्य मत–मतान्तरों को मानने की आवश्यकता क्यों पड़े? और सृष्टि का अन्त चौदहवीं सदी में माना जाता है जबकि चौदहवीं सदी तो समाप्त हो गयी। फिर यह संसार समाप्त क्यों नहीं हुआ? कयामत क्यों नहीं आई? क्या मोहम्मद साहब से पूर्व या इस्लाम के आरम्भ से पूर्व यह संसार नहीं था? क्योंकि इस्लाम के उदय को मात्र 1505 वर्ष हुए हैं, संसार तो इससे पूर्व भी था और रहेगा। मेरा दूसरा प्रश्न था कि जब एक मुस्लिम पति एक समय में चार पत्नियाँ रख सकता है तो एक मुस्लिम पत्नी एक समय में चार पति क्यों नहीं रख सकती? इस्लाम में औरत को अधिक अधिकार नहीं है। एक पुरुष के मुकाबले दो स्त्रियों की गवाही ही पूर्ण मानी जाती है। ऐसा क्यों? आखिर औरत भी इन्सानी जाति की अंग है। फिर उसे आधा मानना उस पर अत्याचार करना कहाँ की बुद्धिमानी है और कहाँ तक इसे अल्लाहताला का न्याय माना जा सकता है? 80 साल का बूढ़ा 18 साल की लड़की से विवाह रचाकर इसे इस्लामी नियम मानकर सारे संसार को मज़हब के नाम पर मूर्ख बनाये, यह कहाँ का न्याय है, इस प्रश्न का उत्तर भी मुझे सत्यार्थप्रकाश में मिला। महर्षि दयानन्द ने भगवान मनु तथा वेद–वाक्यों के आधार पर सिद्ध किया है कि स्त्री एवं

पुरुष दोनों को समान अधिकार है। एक पत्नी से अधिक तब ही हो सकती हैं जब कोई विशेष कारण हो (पत्नी बाँझ हो, सन्तान उत्पन्न न कर सकती हो) अथवा एक पत्नीव्रत होना स्वभाविक गुण होना चाहिए। मनु ने कहा है—

यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवताः !

जहाँ नारियों की पूजा (सम्मान) होती है वहाँ देवता वास करते हैं। तीसरा प्रश्न मेरे मन में था स्वर्ग व नरक का (दोजख और जन्नत)। इस्लामी बन्धु मानते हैं कि कयामत के बाद फैसला होगा। उसमें अच्छे कर्मों वालों को जन्नत व बुरे कर्मों वालों को दोजख मिलेगा। जन्नत का जो वर्णन किया जाता है वह इस प्रकार है कि वहाँ सेब, सन्तरे, मय (शराब), एक व्यक्ति को सत्तर हूरें तथा 72 गिल्में (चिकने–चुपड़े लौंडे) मिलेंगे। मैं मुल्ला–मौलवियों व मित्रों से पूछता था कि बतायें, जब एक पुरुष को जन्नत में लड़कियाँ मिलेंगी तो मुस्लिम महिलाओं को क्या मिलेगा? मेरे इस प्रश्न से वे चिढ़ते थे। चौदहवीं सदी तो बीत गयी, फिर क़यामत क्यों नहीं आई? क्या अब नहीं आयेगी? अल्लाह के वायदे का क्या हुआ? इसमें क्या यह स्पष्ट नहीं है कि कुरआन किसी आदमी की लिखी है? इन सब प्रश्नों से मेरा तात्पर्य किसी का दिल दुखाना नहीं अपितु केवल अपने मन में उठ रही शंकाओं का समाधान करना था। किन्तु कभी भी किसी ने मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया अपितु इन सबसे

दूर रहकर महज़ अल्लाह की इबादत में वक्त गुजारने और मौज उड़ाने का रास्ता दिखाया।

चौथा प्रश्न मेरे हृदय में था सभ्यता का। मैंने मुस्लिम इतिहास का (हज़रत मोहम्मद के प्रादुर्भाव के पश्चात् से अब तक) गम्भीरता से अध्ययन किया है। इतिहास साक्षी है कि इस्लाम कहीं भी वैचारिकता या स्वविवेक के कारण नहीं फैला अपितु इस्लाम के आरम्भ काल से अब तक तलवार का बल, भय, बहुपत्नी प्रथा, स्वर्ग का लोभ या धन का मोह आदि ही इस्लाम के विस्तार का कारण बने। इस्लाम की शैशव अवस्था में हज़रत मोहम्मद को मक्का से निष्कासित भी होना पड़ा। क्योंकि वह अरब की सभ्यता में आमूल परिवर्तन की कल्पना करते थे और अरबवासी अनेक कबीलों में बँटे हुए थे। अबराह का लश्कर तो एक बार मक्का में स्थापित भगवान शंकर के विशाल शिवलिंग (संग अस्वद) को मक्का से ले जाने के लिये आया था किन्तु भीषण युद्ध में अनेकों ने अपने प्राण गँवाए। यह मक्का शब्द भी संस्कृत के मख अर्थात् अग्निहोत्र या यज्ञ शब्द का ही बिगड़ा रूप है। जैसे मोहम्मद साहब का नाम भगवान कृष्ण के मदन मोहन शब्द का अपभ्रंश है इस प्रकार के अनेक प्रमाण अरबी भाषा में मिलते हैं, जैसे आब (पानी) संस्कृत के आपः शब्द का ही रूप है। इस समय इस विषय पर चर्चा करना हमारा उद्‌देश्य नहीं। मुस्लिम इतिहास में एक भी प्रमाण त्याग, समर्पण या सेवा का नहीं मिलता। वैदिक संस्कृति में इतिहास के झरोखे से यदि

देखें तो मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम पिता की आज्ञा का पालन कर वन प्रस्थान करते हैं। किन्तु दूसरी ओर औरंगजेब अपने पिता को जेल में कैद कर बूँद–बूँद पानी के लिये तरसाता है। यह त्याग, समर्पण एवं सेवा का ही प्रतिफल है कि विगत् दो अरब वर्षों में वैदिक संस्कृति महान बनी रह सकी। मेरे परिवार के इतिहास के साथ भी एक काला पृष्ठ जुड़ा है कि उन्हें प्रलोभनवश अपना मूल धर्म त्यागकर इस्लाम में जाना पड़ा। मैं स्पष्ट शब्दों में कहता हूँ कि आपकी पूजा–पद्धति कुछ भी हो सकती है, आप किसी भी समुदाय के हो सकते हैं किन्तु जिस देश में पले–बढ़े हैं उस देश को तो अपनी माँ मानना ही चाहिए। राष्ट्रभक्ति किसी व्यक्ति का पहला कर्त्तव्य होना चाहिए, वैदिक धर्म की महानता के अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं, किन्तु यहाँ मेरा उद्देश्य मात्र कुछ विचारों पर लिखना है, क्योंकि विगत् इक्कीस वर्षों में मेरे सम्मुख यह प्रश्न रहा है कि मैं हिन्दू क्यों बना? मैं प्रत्येक व्यक्ति को जन्म से हिन्दू ही मानता हूँ क्योंकि कोई मनुष्य बिना माँ के गर्भ में स्थान पाये विकसित नहीं हो सकता है। यहाँ तक कि विज्ञान की पहुँच टेस्ट ट्यूब चाईल्ड को भी माँ के गर्भ में ही आश्रय लेना पड़ा, तभी उसका पूर्ण विकास सम्भव हुआ। माँ के गर्भ में प्रत्येक शिशु की नाभि से जुड़ा व दूसरी ओर माँ की नाभि से जुड़ा नाल या नाड़ क्या यज्ञोपवीत अर्थात् जनेऊ नहीं होता? उसमें भी तीन शाखाएँ होती हैं, जिस प्रकार जनेऊ में तीन तागे होते हैं।

यह प्रश्न मुझे विचलित करता रहता था और वैज्ञानिक भी है। अतः माँ के गर्भ में तो प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू ही है, जन्म के पश्चात् मुसलमानियाँ कराये बिना मुसलमान और बपतिस्मा कराये बिना ईसाई नहीं बना जा सकता। अतः इन क्रियाओं के पूर्व बच्चा काफिर होता है और काफिर का अर्थ है हिन्दू, अतः संसार का प्रत्येक शिशु हिन्दू है। मूल हम सबका वेद है, अर्थात् सत्य सनातन वैदिक धर्म। आशा है मेरे मित्र मेरी भावना को समझेंगे, मेरा उद्देश्य किसी भी भावनाओं को चोट पहुँचाने का नहीं अपितु केवल अपने विचारों से समाज को अवगत कराना मात्र है। किन्तु यदि फिर भी किसी की भावनाओं को मेरे कारण ठेस लगे तो उन सबसे मैं क्षमा–याचना करता हूँ।

30 अगस्त 1981 को वैदिक धर्म स्वीकार करने के उपरान्त पांचजन्य के सम्पादक को दिया गया साक्षात्कार

रफत, आनन्द सुमन क्यों बने ?

—तरुण विजय,
सम्पादक पाञ्चजन्य (दिल्ली)

"मैं समाचार–पत्रों में छापी जा रही इस खबर का खण्डन करता हूँ कि मैंने धर्म–परिवर्तन किया है।" यह कहकर चौंकाते हुए प्रसिद्ध मुस्लिम विद्वान एवं युवा मुस्लिम नेता डॉ. कुँवर रफत अखलाक रावज़ादा जो अब हिन्दू धर्म में प्रवेश करने के बाद डॉ. आनन्दसुमन सिंह नाम से प्रसिद्ध हुए हैं, ने आगे कहा, "मेरे पूर्वजों ने सोने के चन्द टुकड़ों और नवाबी जागीर के लोभ में धर्म–परिवर्तन कर इस्लाम कबूल किया था। मैंने उस भयंकर भूल का प्रायश्चित्त किया है और इस तरह अपने वास्तविक घर में लौट आया हूँ। इसलिये मेरा यह 'पुनरागमन' धर्म–परिवर्तन नहीं अपितु पुराने पाप का प्रायशचित्त और भूल सुधार है।"

सबको चौंका गया

इस समय जब कि चारों ओर मीनाक्षीपुरम् की इस्लामी गर्द के गुबार उठ रहे हैं, डॉ. रफत अखलाक

का आनन्दसुमन में परिवर्तन सबको चौंका गया है। डॉ. आनन्दसुमन नवाबी ठाट–बाट और ऐश्वर्य में पले–बढ़े उच्च शिक्षित युवक हैं, जो अभी कुछ समय पहले तक हिन्दुस्तान को 'इस्लामी मुल्क' में तब्दील करने के लिये काम कर रहे थे। वह 'इस्लामिक छात्र' नाम के मुस्लिम छात्र संगठन के संस्थापक अध्यक्ष रहे हैं। इस संगठन के देश में प्रायः चार लाख सदस्य हैं। इसके अलावा वह अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के छात्र नेता तथा जमाते इस्लामी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य रह चुके हैं। डॉ. कुँवर रफ़त अखलाक रावज़ादा के रूप में इन्होंने देश के विभिन्न भागों में जमाते इस्लामी की ओर से इस्लाम का प्रचार किया है और बीस से अधिक हिन्दुओं को अपनी व्यक्तिगत कोशिशों से मुसलमान बनाया है।

तो फिर ऐसा अचानक क्या हुआ कि पब्लिक स्कूल में शिक्षा पाए, चिकित्सा विज्ञान स्नातक और कट्टर इस्लामी विचार वाले इस नौजवान के दिल में उस रास्ते को अपनाने की चाह जगी, जिस रास्ते का ध्वंस करने के लिये वह अब तक कार्य कर रहा था?

अचानक नहीं हुआ

'अचानक कुछ नहीं हुआ भाई, डॉ. आनन्द ने रहस्यमयी मुस्कान के साथ कहा—''काफी अर्से से मैं वैदिक धर्म के बारे में कुछ पुस्तकों का अध्ययन कर रहा था। इस अध्ययन का कोई खास मकसद नहीं था। बस

यूँ ही अपने एक मित्र के आग्रह पर पढ़ता था। हिन्दुत्व के बारे में जब–तब चर्चा भी होती रहती थी। एक बार मुझे संघ द्वारा आयोजित रक्षा–बन्धन के कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया था। मैं उस कार्यक्रम में गया जरूर, पर मेरे इस्लामी ज़ज्बात इतने कट्टर थे कि उस कार्यक्रम में जब मुझे प्यार का प्रतीक धागा बाँधा गया तो नफरत से मैंने उसे सबके सामने तोड़ दिया था। लेकिन फिर भी मुझे अब लगता है कि वैदिक साहित्य के अध्ययन व चर्चाओं का असर शायद मेरे अन्तर्मन में कहीं हो रहा था।"

'फाजिले इस्लामियत' (इस्लामी धर्मशास्त्र का स्नातक) यह युवक जो हमेशा शेरवानी व अलीगढ़ी पाजामा और 'पवित्र दाढ़ी' में दिखता था तथा हर रोज़ पाँच दफा नहीं नौ दफा नमाज पढ़ने के लिये सुप्रसिद्ध था, जब पिछले वर्ष जनवरी में घर गया तो यह देखकर सन्न रह गया कि उसके 76 वर्षीय पिता ने एक युवा लड़की से ब्याह रचा लिया है। वह अपने पिता के इस अजीब व्यवहार और इस कार्य को इस्लाम की स्वीकृति का औचित्य न समझ सका। पिता से जब उसने इस शादी के खिलाफ अपनी राय जाहिर की तो पिता ने डाँट दिया और उसे सिर्फ पढ़ाई और पैसे से मतलब रखने के लिये कहा। रफत अखलाक ने अपनी पाँचवीं माँ को देखा (इससे पूर्व उसके पिता ने चार विवाह किये थे) तो शर्म से उसका सिर झुक गया।

जमाते इस्लामी की करतूत

यह रफत के मन में नये धार्मिक विश्वास की आधारशिला को लगा पहला धक्का था। इसके कुछ अर्से बाद हैदराबाद में जमाते इस्लामी का बहुचर्चित सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में मुस्लिम युवकों के प्रमुख नेता तथा जमाते इस्लामी की कार्यकारिणी के सदस्य के नाते रफत अखलाक सभी महत्वपूर्ण बैठकों में शामिल हुए। उन्हीं के शब्दों में, "28 फरवरी, 81 की रात को हैदराबाद में जमात के प्रमुख नेताओं की अरब के एक बहुत बड़े उद्योगपति शेख अलरशीद के साथ गुप्त बैठक हुई। इसमें शेख ने साफ कहा कि अब वह जल्द से जल्द हिन्दुस्तान को इस्लामी गणराज्य में बदलने की योजना को सफल देखना चाहते हैं। बैठक में इस बारे में एक प्रस्ताव पारित होने के लिये जब आया तो मैंने उस पर दस्तखत करने से इन्कार कर दिया। मुझे साफ लगा कि यह अपने ही मुल्क के साथ गद्दारी और बलात्कार है। इस बात पर जमात के प्रेसीडेण्ट मौलाना युसुफ से मेरी झड़प भी हो गई, फलतः उसी दिन मैं जमात सें इस्तीफा देकर हैदराबाद से लौट आया। मेरे दिमाग में भयंकर उथल–पुथल मची हुई थी। मेरे तमाम विश्वास लड़खड़ा गये थे। मैं सोच रहा था कि यह कैसा धार्मिक विश्वास है जो एक साँस में सारी दुनिया के लोगों को अपना भाईवत् बताता है और दूसरी साँस में गैर–मुस्लिमों से नफरत करना, उन्हें कत्ल तक कर देना वाजिब करार देता है। यह कैसा

मज़हब है जो मौत का इन्तज़ार कर रहे एक बूढ़े के साथ 18 साल की लड़की के ब्याह की मंजूरी देता है। यही नहीं, जिस मुल्क में हम पले–बढ़े, जहाँ की हवा हमारी रग–रग में घुली है, उसी मुल्क के साथ बलात्कार करने की प्रेरणा देता है।''

इसी चिन्तन और आत्मालोचन के दौरान रफत अखलाक को उन पुस्तकों (वेद, सत्यार्थप्रकाश आदि) की याद आई, जो ''बिना किसी खास मकसद के'' उन्होंने पिछले दिनों पढ़ी थीं। घंटों हिन्दुत्व पर हुई चर्चाएँ भी उनके मस्तिष्क को एक दिशा सुझा गयीं और वह अनेक हिन्दू नेताओं से मिले। उन्होंने अपनी जिन्दगी की दिशा बदलने का निर्णय कर लिया था।

शुरू में हिन्दू समाज के कार्यकर्त्ता सन्देहवश उत्साहित नहीं थे, लेकिन रफत के निरन्तर आग्रह और ईमानदार स्वीकारोक्तियों ने उन्हें उनके अचल इरादे का यकीन दिला दिया।

रफत मार्च, 81 में वैदिक धर्म में लौटना चाहते थे, किन्तु तभी अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में छात्र असन्तोष उभरा और इन्हें अन्य छात्र नेताओं सहित गिरफ्तार कर लिया गया। मई, 81 में वह जेल से छूटे और फिर हर साल की तरह गर्मियाँ बिताने नैनीताल चले गये। 19 जुलाई को रफत के पिता की पहली बरसी थी (जुलाई, 80 में उनका देहान्त हो गया था)। बरसी की रस्में निभाने के बाद रफत ने अपने इरादे को, जो इतना

समय बीतने पर और पुष्ट हुआ था—'अमली जामा पहनाने' का निश्चय कर किया।

घर वापसी

दिल्ली में आर्यसमाज के नेताओं ने इस घर वापसी के कार्यक्रम को पूर्ण प्रचार के साथ सम्पन्न करने का निश्चय किया ताकि अन्य 'भटके हुए' भी प्रेरणा पा सकें। स्वयं रफत की भी यही इच्छा थी।.....और बस फिर एक तूफान–सा उठा। मीनाक्षीपुरम् का जवाब आनन्दसुमन में खोजा जाने लगा। उधर आनन्द के पूर्व पंथ के बौखलाए लोगों की फोन पर सिर्फ धमकियाँ ही नहीं सुनी गईं अपितु कीर्तिनगर आर्यसमाज में, जहाँ उन्हें शुद्धि के बाद ठहराया गया था, कुछ ऐसे लोग भी आए जिनके मन्तव्य संदिग्ध थे। लिहाज़ा आनन्दसुमन एक अन्य सुरक्षित जगह ले जाये गये। वहाँ उनसे काफी देर तक हुई बातचीत के अंश यहाँ प्रस्तुत हैं।

वतन-परस्ती की आग

तरुण विजय—आपने कहा कि हैदराबाद में जमाते इस्लामी की गुप्त बैठक में अरब उद्योगपति द्वारा हिन्दुस्तान को इस्लामी मुल्क में बदलने के प्रस्ताव पर आपने दस्तखत नहीं किये और इस्तीफा देकर लौट आए, पर एक कट्टर मुसलमान होने के नाते, जो आप थे भी, आपको तो ऐसे किसी भी प्रस्ताव से

खुशी होनी चाहिए थी।

डॉ. आनन्दसुमन—हाँ, एक अन्धविश्वासी मुसलमान के नाते तो जरूर मुझे खुशी होती, पर अफसोस! मेरे दिल में वतनपरस्ती की आग थी। मैं अपने वतन के साथ इस गद्दारी को सहन न कर सका। इस्लाम को मानना एक बाद है, पर विदेशी पैसे के बल पर अपने मुल्क की अस्मत से खेलना माँ के साथ बलात्कार के समान है।

तरुण विजय—क्या खद्दर का यह मोटा धोती–कुर्ता पहने हुए आपको अपने नवाबी ठाट–बाट की याद नहीं आती?

डॉ. आनन्द—नहीं। जब मैं अपने घर से चला तो बदन पर एक भी कपड़ा उस घर का नहीं पहना। एक कुर्ता–पजामा अपने दोस्त से उधार लेकर खरीदा था, वही पहनकर आया था। उस नवाबी ठाट–बाट में पाप की दुर्गन्ध थी। अब मुझे अजीब–सा सुकून महसूस हो रहा है। आपको आश्चर्य होगा कि मैं पहले हर रोज मीट खाता था, अब विशुद्ध शाकाहारी भोजन करता हूँ। सुबह पाँच बचे उठकर स्नानादि करके संध्या करता हूँ, दिन में समय मिलने पर वैदिक धर्मशास्त्रों का अध्ययन करता हूँ और इस तरह मुझे जो चैन महसूस हो रहा है वह मैंने कभी पहले महसूस नहीं किया था।

तरुण विजय—जब आप घर से चले तो इतनी सम्पत्ति

का मोह नहीं हुआ?

डॉ. आनन्द—जी नहीं। मैंने नयी जिन्दगी जीने का इरादा कर लिया था। जिस दिन मैं चला (7 अगस्त को) उस दिन अपने एकाउण्ट का करीब ढाई लाख रुपया, जमीन–जायदाद का हिस्सा सब–कुछ भाइयों के नाम लिख आया था। मुझे जायदाद नहीं चाहिए, जो चाहिए था वह मिल गया यानी अपना घर। अब मैं वैदिक धर्म का प्रचारक बनना चाहता हूँ।

तरुण विजय—जब आपने घर में अपना इरादा बताया तो आपके घर वालों ने रोकने की कोशिश नहीं की?

डॉ. आनन्द—रोकने की कोशिश तो की किन्तु मैं निर्णय कर चुका था। और कही गई बात का पालन करना मेरा धर्म है।

तरुण विजय—आपके वह कौन से पूर्वज थे, जिन्होंने धर्म–परिवर्तन कर इस्लाम कबूल किया था?

डॉ. आनन्द—उनका नाम ठाकुर बलदेव सिंह था। उन्हें आप लोगों द्वारा धर्मनिरपेक्ष, उदार बादशाह कहे जाने वाले फर्रुखशियर (पुत्र औरंगजेब) ने ही नवाबी बख्श कर मुसलमान बनाया था। मेरा तो अब पक्का यकीन हो गया है कि जिस अवस्था पर मैं अब तक चला, उसका अनुसरण कर कोई भी देश–भक्त नहीं हो सकता। देखिए, जब सिन्ध में पहले–पहल मुसलमान आए और उन्होंने वहाँ के राजा से शरण माँगी तों राजा ने उनका स्वागत किया और उन्हें

शरण देने की बात पर एक शर्त रखी कि वे गौरक्षा करेंगे। इस शर्त के प्रतीकस्वरूप उन्होंने एक कटोरा दूध उन मुसलमानों को भिजवाया जवाब में मुसलमानों ने वह दूध शक्कर घोलकर लौटाया, जिसका अर्थ था कि वे हिन्दू समाज में शक्कर बनकर रहेंगे। लेकिन इतिहास बताता है कि ऐसा नहीं हुआ। अभी पैंतीस साल पहले उन्होंने देश के टुकड़े करवाए और अब भी हिन्दुस्तान को इस्लामी राज्य में बदलने की कोशिश कर रहे हैं। मेरा उनसे यह कहना है कि वह सच्चाई समझें और इस देश में इस देश के होकर रहें। मेरा यह विश्वास है कि हिन्दुस्तान का हर आदमी, भले ही मज़हबी तौर पर मुसलमान, ईसाई क्यों न हो पर कौमी तौर पर हिन्दू है, यही सबको मानना चाहिए।

तरुण विजय—अभी आपके चाचा ने यह बयान दिया था कि आप उनके खानदान के नहीं हैं?

डॉ. आनन्द—(व्यंग्य से) उनके मज़हब की ऊँचाई का इससे बड़ा सबूत क्या हो सकता है कि उन्होंने अपने खून को ग़ैर क़रार दे दिया?

तरुण विजय—आपने कहा कि 20 हिन्दुओं को मुसलमान बनाया। कैसे?

डॉ. आनन्द—वे या तो आर्थिक परेशानियों से ग्रस्त थे या अधिक शादियाँ करना चाहते थे। हम दोनों ही तरह से उनकी मदद करते थे। इस्लाम कबूलने पर

सामान्यतः प्रति व्यक्ति 20-25 हजार रुपये तो देते ही थे, अन्य सहायता अलग से।

तरुण विजय—अन्य सहायता क्या?

डॉ. आनन्द—यही नौकरी लगवा दी, या घर बनवा दिया, शादी करवा दी। 1977 में दिल्ली में ही एक अग्रवाल परिवार को मैंने मुसलमान बनाया था। उस लड़के का नाम हेमकुमार अग्रवाल था जिसे नसीमगाज़ी का नाम दिया गया। आजकल वह जमाते इस्लामी के दफ्तर में नौकरी करता है। उसके परिवार में प्रायः 15 सदस्यों ने इस्लाम कबूला। हमने उसे गाजियाबाद में प्रायः तीन लाख रु. की लागत से कोठी बनवा कर दी।

तरुण विजय—यह सब पैसा सीधे तो आपके पास आता नहीं होगा, इसका ज़रिया क्या है?

डॉ. आनन्द—कई तरीके हैं। एक सबसे आम और आसान तरीक़ा तो यह है कि अरब, ईरान के दूतावास यहाँ विभिन्न प्रोग्रामों, मस्ज़िदों को दान आदि के नाम पर करोड़ों रुपया भेजते हैं। घोषित किए गए प्रोग्राम पर नाममात्र का खर्च कर, बाकी रुपया धर्म–परिवर्तन जैसे कामों के लिये सौंप दिया जाता है।

तरुण विजय—कुछ लोगों को यकीन नहीं आ रहा है कि आपने बिना सोचे, किसी लालच के हिन्दू धर्म अपनाया है।

डॉ. आनन्द—अभी। कल एक ऐसी ही सोच के मारे हुए पत्रकार प्रेस कांफ्रेंस में आए थे। उर्दू प्रेस के थे। मुझे एक कोने में ले गये और पूछने लगे 'यार, सच–सच बताओ, हिन्दुओं ने तुम्हें कितना पैसा दिया है?' मैंने कहा—'ज़नाब, आप प्रेस कांफ्रेंस में आए हैं, मेरे मेहमान हैं, वरना आपको इसका मजा चखा देता। आपको मैं पाँच लाख रुपये देता हूँ, बोलिए, हिन्दू बनेंगे?' बस ख़िसियाकर वह चले गये।

तरुण विजय—मीनाक्षीपुरम् में हरिजनों को मुसलमान बनाए जाने पर आप क्या सोचते हैं?

डॉ. आनन्द—यह एक बड़ा भयंकर षड्यंत्र है, जिसे हमें विफल करना है, मेरा हरिजन भाइयों से यह अनुरोध है कि वे इस बहकावे में न आएँ कि मुस्लिम समाज में भेद–भाव नहीं है।

मैं एक लम्बा काल इस मज़हब में काट चुका हूँ। जाति प्रथा मुसलमानों में भी बहुत है। उदाहरण के लिये कोई पठान, जुलाहे का छुआ पानी भी नहीं पीता। मुसलमान लोग अपनी ऐय्याशी के लिये भले ही हरिजनों की लड़कियाँ ले लें, पर अपनी बेटियाँ हरिजनों को नहीं ब्याहेंगे। हम हिन्दुओं में तो पत्नी सहधर्मिणी है, लेकिन मुसलमानों में पत्नी सिर्फ औरत है, शरीर है जिसको भोगनी ही उनका उद्देश्य है।

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

आनन्दसुमन सिंह

डा० कुँवर आनन्दसुमन सिंह का जन्म एक प्रतिष्ठित मुस्लिम परिवार में हुआ। उनकी शिक्षा–दीक्षा भी उच्चस्तरीय हुई। इस्लाम का अध्ययन उन्होंने खूब किया। डॉ० साहब की विशेषता यह रही कि उनका मन और मस्तिष्क सदा जिज्ञासु रहा है, सत्य की खोज ने उन्हें धीरे–धीरे ऐसे कगार पर लाकर खड़ा कर दिया जहाँ उन्हें यह स्पष्ट हो गया कि अब उनको अपनी आत्मा की रक्षा हेतु, उसे स्वतंत्र करने हेतु उस कगार से कूदना ही पड़ेगा और वह कूद गये।

३० अगस्त १९८१ को उन्होंने इस्लाम त्याग कर वैदिक धर्म की दीक्षा ली। पहले डॉ० कुँवर रफ़त अखलाक़ रावज़ादा के नाम से जाने जाने वाले अब डॉ० कुँवर आनन्दसुमन सिंह हो गये।

पहले वह लोगों को इस्लाम की छत्र छाया में आने का निमंत्रण देते थे अब उनके प्रवचन सुनने के लिये बुद्धिजीवी वर्ग सदैव उत्सुक रहता है।

डॉ० साहब का वैदिक सनातन धर्म में स्वागत है।

- पंडित ब्रह्मदत्त भारती